

मुद्रणालय—जैन प्रिंटिंग प्रेस, कोटा

सर्वाधिकार लेखक के आधीन

प्रथम संस्करण

१००० प्रति स० २०११ विक्रमी

प्रकाशक:—

आनन्द कुटीर, कोटा

सम्पूर्ण

स्वर्गीय बहिन सरजकुंवर को जिसकी
दिवंगत आत्मा आज भी
सजल प्रेरणा बन कर विश्व-
चेतना की युग व्याप्त चिर
कालीन करुणा का
संगीत अक्षर अक्षर
में भर रही है ।



स्मृति

कुँअर अमरसिंह कृत “निःश्वास” काव्य को ध्यानपूर्वक पढ़ा। कल्पना और भावुकता से ओत-प्रोत इस काव्य में अनुभूति की व्यञ्जना भी बहुत अधिक मात्रा में पाई जाती है। इस काव्य को पढ़कर महाकवि प्रसाद के अमर काव्य “आँसू” का स्मरण अनायास ही हो आता है। कवि हृदय की व्यथा इन निःश्वासों के रूप में मूर्त होकर काव्य जगत में अवतरित हुई है। किन्तु निःश्वासों में अनिवार्य रूपेण पाई जाने वाली अस्पष्टता और धुँधलापन काव्य में स्पष्टता उतर आया है जो संभवतः भावों की उत्कटता और उद्वेग के बाहुल्य का ही परिणाम है। रहस्यवाद की परंपरा को लेकर चलने वाले इस काव्य में पाई जाने वाली यह अस्पष्टता भी काव्य को सुन्दर बनाती है और उसे एक बार पढ़ कर ही पाठक की तृप्ति नहीं होती है। अपने जिस आशापूर्ण उज्ज्वल भविष्य की भूलक कवि ने इस काव्य में दिखाई है वह अवश्य ही वास्तविक सत्य बन कर हमारे सामने आवेगा, ऐसा मेरा दृढ विश्वास है। इस काव्य की रचना के लिए कवि को बधाई देते हुए मैं आशा करता हूँ कि समय आने पर वह अवश्य ही राजस्थान के कवियों में अपना समुचित उच्च स्थान प्राप्त कर लेगा।

नई दिल्ली }
मार्च १२, '५४ }

रघुवीरसिंह
(सीतामऊ)

दो शब्द



विश्व के चिरपरिचित करुण-क्रन्दन का आभास मुझे अपनी बहिन सूरजकुँवर के देहावसान के पश्चात् विशेष रूप से होने लगा और वह प्रकृति के मधुमय, रंगीन उपकरणों की चिर तृपित भावनाओं से अधिक गहरा हो चला तथा उन उपकरणों में अपना विम्ब्र निरखने लगा, यही इस कविता का स्रोत-स्पन्दन है, जिसे लगभग ग्यारह वर्ष पहिले लिपिवद्ध कर लिया गया था। कोटा महारानी साहिबा ने इसका सम्मान किया और उन्हीं की सहायता के कारण यह पुस्तक प्रकाश में आरही है। अतः मैं उनका आभारी हूँ।

कोटा
आपाड़ सं० २०११ }
}

अमरसिंह

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ

१
५
६
१५
१६
२२
२२
३१
४
६
७
८

पांक्ति

८
१
१०
६
५
३
७
४
४
६
४
५
६
१२
१

२
३
४
५
६
७
८
९
१०
११
१२
१३
१४
१५
१६
१७
१८
१९
२०
२१
२२
२३
२४
२५
२६
२७
२८
२९
३०
३१
३२
३३
३४
३५
३६
३७
३८
३९
४०
४१
४२
४३
४४
४५
४६
४७
४८
४९
५०
५१
५२
५३
५४
५५
५६
५७
५८
५९
६०
६१
६२
६३
६४
६५
६६
६७
६८
६९
७०
७१
७२
७३
७४
७५
७६
७७
७८
७९
८०
८१
८२
८३
८४
८५
८६
८७
८८
८९
९०
९१
९२
९३
९४
९५
९६
९७
९८
९९
१००

१
१२
४

अशुद्ध

कितलका

म

आत

जलता

हा

वदना

की

करता

सिमटा

हैं

म

रेखा

प्रात

आतीं

उमग

धुल धुल

रलित

घास

सर से

आहालदों

दुल कर

क

विल खाते

{ डर मौन विकल-

{ सा धामें ।

आवेगा

हंसता है

आनन्दाश्रु

शुद्ध

किलकता

में

आते

जसती

हो

वेदना

को

करती

सिमटी

है

मे

रेख

प्रति

पातीं

उमगें

धुल धुल

कलित

प्यास

सरसे

आहादों

दुलका

क

विलखाते

{ डरमौन विकल-

{ सा धामें

आवेग

हसती है

आनन्द अश्रु

निःश्वास

काणिकाओं की साईं में
कर विकल—विश्व के दर्शन,
श्यामा पुतली से देखा
अग—जग का करुण विवर्तन ।

जब निःश्वासों से धूमिल
चेतन उस पार बिलखता;
किसके कर से चेतन हो
जग—रोदन यहाँ कितलका ।

निःश्वास

स्वर गीतातीत अपरिचित
साकार मुखर हो उठता;
सित-श्यामल-घनजाली में
जब तरल बिन्दु झलमलता ।

रागिनी विकल क्रन्दन घन
ठे कम्पित स्वर में बजती;
दुर्दिन की वीणा वनकर
गीले स्वर नभ में मरती ।

नभ की अविरल झड़ियों में
क्यों आज विकल-स्वर घुलते ?
मानम-गीड़ा से भग्नि
साकार बिन्दु घन दुलते ।

निर्झर स्वर में रो झंझा
 अपनी बीती कह जाती;
 निज उर के भारी स्वर से
 झकझोर मचा रह जातीः
 उसकी सुघ में मृदु लहरें
 विक्षुब्ध उर्मियाँ बनती;
 वे मचल-मचल, उठ-उठ गिर,
 निर्जन में करुणा भरती ।

निःश्वास

गल्लि कगार खस खस कर,
क्यों सवेदन के स्वर में;
कुछ रोक न पाते पीडा,
गल बहते क्या न लहर में ?

पीडा कोमल घावों की
मर्म-स्थल से ला लाकर
उन चिर परिचित लहरों को
देते कगार गिर गिर कर ।

गल्लि पुलिनो से टकरा,
लहरें करती हैं घातें;
मोन्ने कगार रोते हैं,
सह सह कर मीठी घातें ।

निःश्वास

इस ओर विखरती लोल लहर,
उस ओर वहीं इठलाती;
दो शून्य कगारों से मिल
रेखा अशून्य दिखलाती ।

बस चिह्न-मात्र रह जाता
उस कलरव मय जीवन वा;
उनके पल भर रहने का
उस कोलाहलमय क्षण का ।

सागर में लहर विकल है,
मानस में परि मचलती;
है कौन प्रतिध्वनि किसका
करुणा गाथा सी कहती ?

पतवारों से टकरा कर,
 खा सा कर कर थपेड़े;
 विखरी है मृदुल तरंगों
 भावों सी, बुद्बुद् छोड़े ।
 धूमिल रेखा में चमका
 कोने में झिलमिल तारा;
 दर्शन की उत्सुकता है,
 पर बहती अविरल धारा ।
 आवेगों के घन धुँधले—
 मानस-नभ पर आ छाये;
 आश्वामन—सवेदन से
 शीतल भ्रौंमू ढल आए ।

निःश्वास

सुख-दुःख के छोर मिलाता
वातास हठीला वहता;
धानों की सरिताओं में
सुख-दुःख की लहर उठाता ।

वाप्याकुल रुँधे गले में
बयों, करुण गीत भर भर कर,
निज व्यथा तृणों से कहता
वह जाता सरक सरक कर ।

जन चोंदी की रातें भी
नित सिसक सिसक कर रोतीं;
मेरी, झरती झोंखों की
बूँदें भी नभ में सोतीं ।

निश्वास

भरे मानस म कव के
मिठे सगीत सँजोए;
हिचकी में डूबे अगणित
कोमल कोमल स्वर सोए ।

कितने परिचित खेलों की
सुस्मृति सृने से क्षण में;
स्वप्नों में कुलबुल करती
जग पढ़ती पलक पुलिन में ।

जब जगती सो जाती है,
तब दूर क्षितिज से आकर;
पत्तों पत्तों से कहता,
पढिा कोई गा—गाकर ।

निश्वास

पलकों में व्यथा समेटे
पुतली में आँसू फलमल;
आँसू में डूबी सुस्मृति
सुस्मृति में कसक तरलकल ?

फेर तरल कसक में घड़कन
में कान लगा सुनता हूँ;
सम्बल विहीन जीवन की
श्वासों विखरा हँसता हूँ ।

निर्जन के शुष्क दृगों में
आँसू तब भर भर आत;
पल्लव के पलक पलक में
वे दुलक दुलक टल जाते ।

वे अरुण दृगों से कलियों
 मुदते पलकों में आकुल,
 क्यों सिहर सिहर कपित सी
 बिलखती अश्रु भर व्योंकुल ?

पुलकित कृसुमों के , अँनने
 से झटक झटक कर मलयज,
 विलराता क्यों वे मोती
 फाँपा करते क्यों, सरसिज ?

ऐसे ही क्षण आहों से
 मानम पट धुँधना होता;
 उन्त व्यापक भावों का
 गुञ्जन त्रिप त्रिप कर रोता ।

निःश्वाम

धीरे धीरे जविन—सुख
सब नील निलय में छिपते;
रो उठते आज स्वर्गों के
कूजन में प्रतिध्वनि करते ।

नरिस पंगुडियों ऋरना,
मदमत्त पवन का घहना,
अलि का उन्मन गुंजन लख
सखिा मैंने चुप रहना ।

कवि का कोमल भोला मन
अविचार समझ कर रोया;
मेरे उर का भारी स्वर
हिचकी मे डूवा सोया ।

निःश्वास

गत मधु—जीवन के सपने
जब आकुल करवट मरते,
मानस मे संचित सोये
तब व्याकुल गीत सिहरते ।

युग युग से झाड खड़े हैं
मेरी फुलसी क्यारी में;
पतझड़ की सूनी साँसें
रज भरती फुलचारी में ।

सूनी मधु की कुंजे हैं
उलटी है मधु की प्याली;
झरती पंखुरियों से वह
ले उड़ा सारभी लाली ।

निःश्वास

नरिव सूखी कलियों की
युग से दुःख भरी कहानी,
उन्मन उन्मन कुसुमों से
आलि कहता भर दग पानी ।
ये रूप ज्वाल मात्ताएँ
ये कृष्ण-जाल चिकुरों के,
स्पन्दन-लहरें भर भर कर
अवसाद वने विधुरों के ।

सुनसान हृदय से उठकर
चरसेगी काली बदली,
यह नरिव आह नहीं है
होने जो निःस्वन धुँधली ।

किन्ना निर्मम मंथन है
इस करुणा द्रवित हृदय का ?
किन्ना आकुल रोदन है
अधमाद गलित मानस का ?

दुःख से पंकिल ज्विन के
 स्वर पिघल पिघल रसराते,
 वेसुध वियुक्त की पाँड़ा
 के श्वास गीत बन जाते ।

श्वासों से सिहर सिहर कर,
 ज्विन की ज्वाला जलता;
 गलते मानस के कण कण
 विसराती हुई मचलती

पाँड़ा की भाव लहरियों
 छल-छल थल-थल कल-कल कर,
 दृग-पुलिनों से टकरा कर
 बह पड़ती विसर विसर कर ।

निःश्वास

आँसू जीवन की गरिमः
वन कर जग में छाया है;
निःश्वास बना करुणामय
वरदान मृदुल आया है ।

कुसुमों के कोमल उर से,
वे ओस-विन्दु ले पड़ा,
कहते रहते क्या प्रतिदिन
तज कर सुजनोचित व्रीड़ा ।

नीला प्याला उलटा है,
मोती से विन्दु उमारे;
सिहरन सी भरता फिरता
किसका निःश्वास किनारे ।

निःश्वाम

रजनी निज आकुल उर की
पीडा ँदों में भरके,
ऊपा को दे चल देती
निःश्वासों के दे झटके ।

केवल कुछ प्रखर प्रभासित
दिनकर का तत्रि उजाला,
हिमकर की सुधा—परित में
भरता आता क्यों ज्वाला ?

अनुराग लालिमा ऐसी
जग सह न सकेगा निर्मम;
ऊपा हो श्याम भ्रुक भी
दृग में झलमल आँसू कण ।

राका हा मन्द पवन की
मधुरेम भ्रुकोर सुन्वकारी;
नौका की मन्थर गति से
लिपटी लहरें बलिहारी ।

निःश्वास

हो क्षितिज चॉदनी दीपित
रजनी गन्धा की क्ष्यारी;
सौरभ में लिपटी सोयी
मेरी मानस फुलवारी ।

आकाश धरणि के कोमल
माँठे विशुद्ध उर मिल कर,
ऋतुका दें स्वेद कणों में
जब मिलन भाव छुक छुक कर,

तारों की मूक हँसी में
कव से उन्मुक्त विरागी;
गिनता है मीगी साँसे
क्या फिर न आयगा रागी ।

क्यों आज धिलखती रजनी
निर्भरिणी तू क्यों व्याकुल ?
मेरी मीगी साँसों में
क्या पा न सकी रब आकुल ?

निःश्वास

ये किसके करुण स्वरों को
ले लहरें व्याकुल उठती ?
कुछ निरख वेदना इनकी
क्यों मेरी व्यथा मचलती ?

हिमगिरि से उतर उतर कर
अगणित रोदन धाराएँ,
सिंचित करती जगती की
कहतीं कुछ व्यथा कथाएँ ।

लिंग देते शून्य पटल पर
तारे वे बँतीं धातें;
ये पुनः लौट आ जातीं
घण्ट भर गतवाली रातें ।

कह कह कर विरस तटों से
 निर्झर किसकी निष्पुग्ता,
 क्यों व्यर्थ छहर खो दंत
 अपने उर की आतुरता ।

माधवी कुंज उजड़े हैं
 फुलसी हैं मृदुल निकुञ्ज;
 डाली डाली पर पीली
 पंगुरियों पर झलि-गुञ्ज ।

धैर्यमय सुखी जगत के
 विधिवत् व्यापार विलसते;
 क्यों मेरे ही स्वर दिखरे
 जो वाग्धार विलसते ?

निःश्वास

किसर्की इतनी निष्ठुरता !
दी कुचल हमारी कलिका;
मधुमय प्रभात में षयोंकर
यह सिहरन भरती लतिष्ठा ?
पर रूप रश्मियों कैसी
लादण्यमयी उस लुवि की ?
झँखों में समा गई हैं
टलती न याद क्यों उसकी ?
माया की विहम्बनाएँ
नेराश्य निशा में फूलीं;
तब सकृच सकृष कलियाँ भी
रस राग रंग निष भूलीं ।

मेरा वियुक्त मानस अब
 निर्ममता सहते सहते;
 हो उड़ा चातकी स्वर बन
 'पी पी' रट रटते रटते।
 निष्ठुर है मायावी है
 छाया सा, सपना सा बन;
 मादकता सी तन्द्रा में
 सुस्मृति बन लौटा मधुक्षय।
 छलना ही छलना फेली
 सान्त्वना मिली मानस को;
 छाया ही सही किसी की
 दाढ़स तो मिला हृदय को।

जग को दुराव क्या सुख से
 यदि है, मुझसे क्यों छीना ?
 दुःख तार द्विक्रियों से ही
 मम जीवन पट अति रूनीना ।

निःश्वास विकल पड़ितुर
 घदली में घुल घुल मिलते;
 अचसाद भरे मानस के
 अवशेष बिखर ऋर पडते ।

नामि पिघली सी जाती है
 निमने सयत्न हूँ कब का !
 नामि पट पर लिखता कुछ
 धुँदों की हूँ दे ढलका ।

निःश्वास

अवसाद कालिमा खेकर
गे मेरे लोचन अपने;
पीड़ा के वर्यों में ही
लिख जाते सुन्दर सपने ।

अन्तर्दाहों से पिघला
उर प्रातिपल उमस उमड़ कर;
व्याकुल वदली सा विगलित
बह पड़ता आँखें भर भर ।

इस ज्वाला जलित हृदय में
उत्तत उसामें जलती;
भाँगे तारों पर अटकी
टूटी सी सासें जलती ।

शांतल सुगन्ध अति मन्यर,
मिठी मद भरी ऋकोरें;
चन्द्रिका रजत किरणों में
लेती जब मृदुल हिलोरें ।

सौरभ अरण्य में उलझी
घचल चुम्बित सी आँखें
उन्मुक्त ठिठक रह जातीं
उन कपल दृगों की पाँखें ।

निःश्वास

उमड़ा छलका आता था
मधु दृग प्याला उरुनाता;
लहरों पर लहर उठाता
प्यासी ऋकम्भोर मचाना ।

तुम सौरभ कण वन आते
मैं पुलकित विस्मित विकसित;
कुसुमों की पंखुरियों वन
भर देता आँसू पुलकित ।

रजनी के कृष्ण पहर में
 जब जग सुख में जा सोता;
 तारे गिन गिन शॉसू से
 शवसाद हृदय का घोता ।
 हग कमलों में शलि सोया
 उन्मन गुष्मन मानस में;
 नीरय पल गीत जुटा कर
 मुरारित होता क्रन्दन में ।

नभ की विस्तृत गोदी में
 तारे हिचकी भर सोते;
 युग युग से जले हृदय के
 वे भाव अहर्निशि रोते ।

जब जब झंझत कर तन्त्री
 अस्ति प्राण सजाते वीणा;
 सुषिक्कर कर म्लान कुसुम की
 गिर गिर पड़ती है वीणा ।

चातक यह मर्म वेदना
 तेरी जड़ नभ क्व सुनता;
 मेरा फ़दन ले जाना
 उसके दृग में जल भरता ।

निःश्वास

जब विस्तृत नभ का अञ्चल
नीरव गूगा चुप रहता;
किन अवसादों से भीगा
अलसित समीर घह चलता ।

किन भावों में डूबा सा
झाता है मंद समीरण;
कलियों के स्मित आनन पर
क्यों छोड़ चला आँसू कण ।

मरु सिकता के अन्तर में
भी बहते शीतल झरने;
कितना आतुर उर लेकर
पाहन लगते हैं झरने ।
विह्वल कातर मीने से
मानस से उठती गिरती;
दृग-पुलिनों तक जाने को
सावेग विकल हो बढ़ती ।

निःश्वास

जब माव विभोर सरित का,
मानस चञ्चल हो उठता;
लहरों का क्षुब्ध विवर्तन
ले शत स्मृति दीप मचलता ।

उस गहरे नील निलय से
निसृत वे विकल लहरियाँ;
नाली सरिता की गोदी
में लेती दीन रूपकियाँ ।

प्रतिमा सजीव करुणा की
ये धिक्वरी हुई तरङ्ग;
टूटे से पुलिनो में ही
भर देती भय उमङ्ग ।

सकरुण उन मूक दृगों की
 लाली में शत घावों के,
 खिलने से खुली अरुणिमा
 के विष बने भावों के।

उस घनी पीर की गाथा
 निर्मम जगती क्या जाने ?
 प्रतिदिन नभ की पलकों में
 धिरते सावन अनजाने।

प्रतिध्वित करण करण तृण तृण
 पत्तों पत्तों पर चंचल;
 किस संवेदन में पिघली
 क्या जाने जगत अचञ्चल ?

निःश्वास

इस भ्रम हृदय के फुस्फुट
टूटे स्वर बहने लगते;
प्राकृत नाना भावों के
सब बंध टूट वह चलते ।

अति प्रबल वेग से करने
कल्लोलिनि वन आकुलतर;
बहने लगते हे अविरल
उर में मीगे स्वर भर भर ।

नीरस निर्जन के उर में
भी पर वे क्षिप रहते हैं;
अगणित भवेदन स्वर जो
तृण तृण पर टस चरते हैं ।

ओ नील निरंकुश नम तल !
है व्यर्थ प्रसारण तेरा;
जब दे न सके तू निर्मम
विधुरों को क्षणिक वसेरा ।
अवसान क्षणों की कटु स्मृति
मानस दल कुरेदती है;
फिर हा हा स्वर में डूबी
दृग पलक मुँदी थकती है ।

निःश्वास

जगती के निठुर हृदय में
प्रतिदिन ये जल काणिकाएँ;
ले एक विकल स्वर मेरा
अंकित करती छलनाएँ ।

इतिहास पुरातन युग का
इस वर्तमान में पलता;
भावी के सूक्ष्म करो मे
केवल विचार संचरता ।

सध्या की दीन अरुणिमा
पलकों पलकों में सोती;
सुधि कर कर मृदु सपनों की
उपा तक रहती रोती ।

खिखराता मुमन सुमन का
जुंगार निठुर हाथों से;
वे कौपा करते सिहरा
झर झर निष्ठुर घातों से ।

अति मृदुल रेशमी घवलित,
 किरयों कोपल पर चंचल
 विकालित जीवन की गाथा
 अंकित करता है आविरल ।

पढ पढ कर उनकी पीड़ा
 डुम दल हैं कौपा करते;
 उस विवश सिहर कम्पन को
 कोमल अज्ञों में भरते ।

ये चञ्चल दीप शिखाएँ
 किसकी समाधि पर जल जल;
 किन श्वाशों से पुलकित हो
 हो उठीं सिहर कर चञ्चल ।

निःश्वास

जय स्वर्ण शैल मालाएँ
अभिनव शृङ्गार विखेरे
उस चितवन के सपनों में
हँसती निज पलक तरेरे ।
कैसे समझू पाहन मैं
जय हृदय हुलसता आता;
गल गल कर पिघल पिघल कर
भीगी सी ताने लाता ।
उन रिक्त प्रकोष्ठ दृगों की
निरव निशि में मलमल मल;
रुच्य स्वर्ण स्वप्न से दीपक
उटने हं बुझ बुझ जल जल ।

ये निर्निमेष अपलक श्लथ
 पलकों की सिमटी कोरे;
 करती क्षुब्धित हृदयों की
 तरलित कुछ मृदुल ऋकोरे ।

लेती है सूनी साँसे
 हो उदासीन जग-लय से;
 काँपा करती कातर हो
 टाली टाली कि भय से ?

किन रगड़ों से वह वह कर
 कति विकल पटुल लहरी सी,
 आ छहर छहर कह जाती
 उद्ध विकल कथा गहरी सी ।

निःश्वास

उन्मुक्त विचञ्चल उन्मन
क्यों अन्यमनस्क मलिन सी
मानस की पीली पंखुरि
सिमटा क्यों साध्य नलिन सी ।

रह रह कर दग्ध हृदय से
ले जाती तप्त उसासै;
कालियों के मृक दृगों में
भग जाती नीरव सासै ।

उडती हँ उम कम्पन में
कातर निराश आशाएँ;
अत्र सिहर मिहर उठती हँ

सपनों में सुष वुध भूले
 दृग में अतीत कलका सा,
 करता चित्रित पीड़ा में
 मृदु आश्वासन हलका सा ।
 पीड़ा में घोर हृदय को
 अरुणिम व्रण खुल खुल पड़ते;
 तव भाव-ज्वर मानस के
 भीगे स्वर रस रस भरते ।

निःश्वास

उन्मुक्त विचञ्चल उन्मन

क्यों अन्यमनस्क भलिन सी

मानस की पीली पंखुरि

सिमटा क्यों साध्य नलिन सी ।

रह रह कर दग्ध हृदय से

ले जाती तप्त उसासे;

कालियो के मृक दगों में

भा जाती निरिच सासे ।

उड़ती है उम कम्पन में

कातर निराश आशाएँ;

अब सिहर सिहर उठती हैं

करुणा की मृदु भाषाएँ ।

सपनों में सुष वुष भूले
दृग में अतीत कलका सा,
करता चित्रित पीड़ा में
मृदु आश्वासन हलका सा ।

पीड़ा में घोर हृदय को
अरुणिम व्रण खुल खुल पड़ते;
तव भाव-ज्म मानस के
भीगे स्वर रस रस भरते ।

निःश्वास

जग की अलसायी पलकों
की घुलती सी तन्द्रा में
चम चम चमका करते हैं
सपने भीठी निद्रा में ।

वरदान माँगने जब जब
आती हैं भिक्षुक जगती,
चुप चुप निर्जन रातों में
नभ की पलकों में जगती,
गाएँ दीपों की मालाएँ
किंकिणि—पिराहित—वीणा—स्वर,
भर जाते मलय पवन से
सौरभ के प्याले मत्वर ।

यों रिक्का रिक्का नर्तन कर
 पायल के छम छम स्वर में;
 जग जग प्राणों की पीड़ा
 भिन्ना की रटन अधर में ।

आ रही अकिंचन वाला
 विधुरी अलकों में रत्नमल;
 रेशमी चिकुर जालों में
 स्वर्गीय सुमन ले कलमल ।

विचलित गहरी स्वासों ने
 सांचित निधि अति आतुर हां;
 तो दी अपने ही हाथों
 में रहा देवता चुप हो ।

निःश्यास

सारी अर्धीर अभिलाषा
मानस की तरल उमगें;
होकर निराश व्याकुल बन
क्रन्दन भर उठी तरङ्गें ।

सर, सरिता में चञ्चल हो,
दृष्टी विखरी छहरी सी;
पुलिनो तक टकरा टकरा
पहुंची न रे ॥ गहरी सी ।

केवल सिकता के नीरव
चौदी से उज्ज्वल पट पर;
सिंच गई भ्रम ध्याशा की
शम रेखाएँ तट तट पर ।

केवल हलचल स्मृति की
क्यों व्यर्थ हुआ करती है ?
पल पल में बनती मिटती
लहरी सरका करती है ।

विस्मृति की खल लेखा में
फिर स्मृति न वह जग पाई;
उषा की नव रेखा में
तूली न रंग भर पाई ।

निःश्याम

यद्यपि कितनी मद घारा
प्रतिदिन खग-कूजन ख में;
माकार कलित कल मीठी
बहती तानों के द्रव में ।

पर कभी न परिचित कोई
मुन पडती वैंसी रागिणि;
यद्यपि सतर्क आतुर हो
जगती मम आग्य विगागिणि ।

प्रति दिवस शान्त पलकों में
भर भर भारी आशाएँ;
चातक की मृक पुकारे
'धार्ता न मृदुल भापाँ ।

क्षिति के मूने कोनों में
वे उलझ उलझ रह जाती;
गर्जित घन की साँसों में
वस निष्ठुरता चख पाती ।

जिनमें कुछ कुछ अपनी भी
कल स्मृतियों में सिंचित कर;
टूटे स्वर भिला पुकारे
विरही अति आतुरता भर ।

सुख दुःख जग में प्रतिपल ही
अपने क्षण बदला करते;
किसको पहचानूँ, फिर लूँ
लहंगों से चपल सरकते ।

धरों नष्ट हुईं पुलकों की
मच्छति तट चूम सरित के;
धिरणों से रंजित फेनिज
निधित सपने किम उर के ।

निःश्वास

आल्हाद उमड़ते बहते
क्यों छहर तटों पर जाते;
पल भर जीवन बेला को
क्यों मोद मग्न कर जाते ।

स्मृति से अनुरंजित होकर
कितनी मादक रेखाएँ;
उस दिश्व मुन्दरी-मुख पर
लावण्य सुलभ चपलाएँ ।

भिमाति वन कर छिप छिप जाती
रंजित कर सौंभ सवेरेः
वन वन रहस्य जगती के
विभ्रित विगलित मुषमित रे ।

निःश्वास

क्षिति के अधरो पर प्रातिदिन
ये घवल नील कुञ्जों में;
उस महा मिलन के सपने
बिसरे तारक पुञ्जों में ।

वे बिसरे गान तटों के
नीरस अधरो पर संक्षिप्त;
किस लिए लहरियाँ अविरल
करती रहती हैं सिंचित ।

सुन सुन कर करुण कहानी
ये ढलक ढलक पिरागे में;
जीवन के युष्क हृदय में
नव नव रहस्य बिसरे ये ।

जागृति के रंजन क्षण ले
वेदना व्यथित चेतन में;
ऊषा अलसाई आई
बेसुष रागित वेदन में ।
संध्या निज अलक दिग्दरे
उर थामे रजत करों में:
घाती जब अश्रु संभारे
जगती के व्याधित उरों में ।
क्यों पुलकों के सावन फिन्
भुक कोष कौष भर भर कर;
पावन की मंजरियों में
गदगदा उठे लुक छिप कर ।

निःश्वास

जीवन की भ्रम उमंग
विद्युत में कसक फसक कर;
किस सुधि में वरसा झरने
नभ दृग से बहती झर झर ।

जीवन की क्षणिक उमंगों
सन्ध्या में जग जग उठती;
जब मधु प्रभात आया तो
क्यों कर छिपने है लगती ।

अवसाद करुण करुणों की
केवल इतनी सी वाणी;
नरिस रज के कण कण में
जग पड़ती करुण कहानी ।

जब मसृण सुकोमल पल्लव
अति स्निग्ध चारु कालिकाएँ;
उर रव को रोक न पाई
धिरती मलिन्द मालाएँ ।

निःश्वास

थिर थी सुकुमार कोरकें
अवसाद घटाएँ छलकीं;
तृण तृण में पीर पिरोकर
शत शत कणिकाएँ दुलकीं ।

प्यालियों विविध फूलों की
भर भर कर करुणालय से;
बहुरि बहुरि सिहरी है
जिस अन्तर के अनुशय से ।

पिघले निःश्याम उमड़ कर
वेदना विजल मानस मे;
पलकों में अटक उलझ कर
रुकने श्यामल गायन से ।

नीलम रेशमी लहरियों
 से शान्त सरोवर का उर;
 किस दुख में लहर लहर कर
 दब उठता सिहर सिहर कर ।

सूने थल की सिकता में
 वयो वर्तुल वर्तुल होकर;
 भोगी सी स्मृतियाँ भर भर
 टोड़े कुछ बिह छहर कर ।

षयो व्यथा जनाये देती
 मुनसान क्षणों में छहरी;
 रे ! कौन सुनेगा गाथा
 निर्जन में यद्यपि गहरी ।

मृकुलित दृग से पीता था
जब मादक चुम्बन प्याले;
मादक श्वासे गिनती थीं
पल पुलक पुलक मतवाले ।

शुचि नम पलकों में घिर घिर
दुर्दिन के श्यामल चादल;
म्हर म्हर कर गरज गरज कर
भरते मगीत तरल कल

फिर भी मेरे स्वर में मिल
 गल गल कर मधु श्वासों में;
 सुख के ही क्षण पनपे थे
 छलना के निःश्वासों में ।

छन छन समीर आता था
 मादक मृकमोर जगाता;
 उस मूक कठोर शिला में
 प्यासी हिलकोर उठाता ।

था निर्भय देखा करना
 शृङ्गार कलित मानस में;
 जय तरल विन्दु नर्तित थे
 भ्रम भरता था आनन में ।

निःश्वास

पर राका रास विरागी
स्वर चरवस बाहर आया;
केसे समझाऊँ उर को
जिसको रोदन ही भाया ।

आनन्द अटकता केवल
भावों की मूक हँसी में
ज्यों अन्धकार छिप रहता
आँखों की एक कण्ठी में ।

आँसू में धरषत टटका
हिचकी में उत्सन्ना सितका
अति दूर दूर मानस में
कल्पना किरण सा चमका ।

निःश्वास

पक्षव की तास लगाती
वह्नारियों नर्तन करती;
मधुमास उफनता छलका
मधुपावलि भूमीं अमती ।

शृङ्गार सजा जाता है
किरणों का लास अनूपम;
कोपल कौपल में मेरा
दृग ऋपता प्रतिपल अरुणिम ।

राहरो में विलसित हर्षित
वातास सुवासित आता;
फाशियों की द्विपी सिसिकियाँ
पर केशरा फाये सुन पाता ।

सरिता की चपल लहरियाँ
 जब जब उन्मत्त मचलतीं;
 सोई फुरफुरी हृदय की
 जग विकल श्वास में बहती ।

मेरे दुख की सुख आशा
 'पलकों में कण भर लाईं;
 नूतन अनन्त जीवन की
 भाँई झलकाती आई ।

रस सरसा शुष्क वृणों में
 मद की हिलफोर उटतीं;
 जीवन की जागृत गरिमा
 'पल्लवित झूम इंटलाती ।

निःश्वास

मुद गया दिवस पलकों में
छिे समिहीन निराशा;
लघु प्राणों के प्याले में
भर भर अनन्त की आशा ।

रजनी शृङ्गार लुटाती
छलना सी क्यों विस्मृति में;
प्रति दिन जीवन रोता है
तारों की म्लान श्रुति में ।

ऐसी ही छलनाओं में
सुख सपने झूला करते;
नव नव चित्रों में नव नव
रंगीन माप कुल बुलते ।

धिर दुख में नित काम्पित हो
 भावी सुख झूला करता;
 आँसू की लड़ियों में ही
 आनन्द विखरता रहता ।

पहचान न पाया भावुक
 अपना क्षण चल माया में;
 चीत्कार पला करता है
 कुञ्जों की कल छाया में ।

मधुसिक्त पाँख में उसकी
 उन्मद अभिलाषा अटकी;
 प्रत्याशा की छाया में
 वैभव की पलकें झपकी ।

निःश्वास

चल चल दुख की रातों में
जग जग सपनों में निशि निशि;
थक थक मुख सोया करता
पल पल दृग दृग में दिशि दिशि ।

सन्ध्या थी, मलयज बहता
अनुराग लालिमा गहरी;
द्विती के अघरों पर रंजित
उर की लाली आ छहरी ।

चुपके से सन्ध्या तारा
जग चन्द्र माल पर चमका;
तब शीश फूल से चूते
मणिमन्थन टूटा उसका ।

चंचल सर मे प्रतिविम्बित
थोड़ा प्रयास सा करता;
निज मनोभाव सा गहरा
रंग ऊपा का ऋलमलता ।
हीरों के द्रव से करने
माणिक मदिरा से पूरित;
यह चितवन मधुमय चंचल
मद पूर्ण प्यालियाँ चुम्बित

मम हृदय निखरता आता
रोदन धारा से घुल घुल;
कल्मष विखरा है सारा
अविरल क्रन्दन में घुल घुल ।
भावना यकी सी सेती
आँसु की फल काणिका में;
तब प्यार चलकना उमड़ा
भावैग राखित सरिता में ।

भावों की द्रवित कहानी
 सुनता आँसू कोमल उरः
 निखराने प्यार उमंगता
 छल छल अपने दग भर भर ।

क्या दुख, रे ! पीड़ा, मानव
 जीवन के विरह मिलन कीः
 जब प्रेम शिखर पर हँसती
 करुणा-कल्याणी जग की ।

दुःख का द्रव सुख का आसव
 क्रन्दन है उर का गानाः
 आँसू मरन्द बूंदों सा
 सिसकी आनन्द विधाना ।

निश्वास

विश्वास मुझे भ्रम में भी
पर धिर हो ऐसी छलना;
जीवन के इन्हीं क्षणों की
सुखदायी प्रहरी कलना ।

सरके चमके ठिठके रुक
जड़ मूक चपल ये मुक्ता;
आशा उल्लास उमंगें
अभिलाष हास उत्मुक्ता ।

उन्मत्त सभी चिन्त्रित से
भरते मन में अस्थिरता;
कोमल तारों पर सहसा
गहरा विपाद है धिरता ।

दुख स्मृतियों के पट फेरे
विरहानल अपलक जलती;
वेदना स्वरो में दूधी
कोमल करुणा है पलती ।
कुसुमों के कोमल उर में
मद मरी मधुरिमा जगती;
पलकों में ललकें छाई
ललकों में घास मचलती ।

अमरों ने वीन बजाई
 कुञ्जों में बटी बघाई;
 विंगित पराग मधुकण से
 मधुरिम निकुंज मुसकाई ।

स्मिति में अनुरंजित कलियाँ
 भर भर अधीर ललचाई;
 तृण तृण में स्वेद बिखरे
 उसकी पलकें अलसाई ।

मलयज अवीर भर लाया
 लहरों ने पायन बाँधे;
 चन्द्रिका विद्यती मंजुल-
 पट साईं निज स्वर साधे;

नरिद रातें भी जागीं
 निज चिकुर रेशमी खोले;
 कुछ झूम झहर लहराकर
 झूले अपांग मृदु भोले ।

शम्पा नरिद आलिङ्गन
 यौवन के मादक क्षण में;
 क्यों घुमड़ नशीले कम्पन
 करते विभोर क्षण क्षण में ।

क्यों बरस झरे रोते वे
 सूती सी साँसें भरते;
 उनके ढलते यौवन के
 आशाप्रद स्वप्न विखरते ।

वह इन्दु पटल अवगुण्ठन
 में किसकी मृदु मुस्काहट;
 छिप छिप दिप दिप इठलाती
 भर भावों में अकुलाहट ।

मधु-विन्दु छलक कर चूते
 आये चुनके कुजों में;
 वन कर मरन्द मृदु सर से
 विकसित प्रमून—युजों में ।

मकरन्द मरी पंगुरियाँ
 अलसाईं किन सपनों में;
 कुछ खुली अंधी तन्द्रा में
 वेमुध सी निव्र नयनों में ।

वह चुप चुप घातें करना
फूलों का हँसकर अलि से;
कुछ अवगुण सरका कर
रस लेना कुसुमावलि से ।

नभ की श्यामल पुतली पर
आहातदों का छा जाना;
चंचल पलकों पर अस्थिर
अभिलाषा का इटलाना ।

निःश्वास

उन स्निग्ध सुमग अंगों पर
भव स्वेद कणों का जमना;
शत शत कंपन में उनके
कल अंगों का थक छिपना ।

सरिता की कल गोदी में
लहरों का मस्त मचलना;
मर मर उमंग पुलिनों के
झधरों पर चुम्बन भरना ।

मेरे मर्मस्थल तल में
वे खलक जगाने आईं
तब म्त्तग्ध मुथिर पलकों में
झलकी हलकी सी झाई ।

निःश्वास

नीरव पर मर्म भरी धी
गहरी पेनी औँलो सेः
निश्वास छोड़ हत आशा
टुकराया या स्वासों से !

गह मृदु चेतना मेरी
जब जब उसकी सुधि करती;
अनुपम आशा शीतलता
थकती आखों में भरती ।
नभ जड़ित सुप्त सा चेतन
तन्द्रा में सुष वृष ग्योकर;
तारों सा जगमग जगमग
कृद्य लोज रहा भी लोकर ।

मानस अम्वर में फेली
 निशि की नीरव पलकों में;
 पाकर सम्बल सोया वह
 आश्वासन था अलकों में ।
 था क्षणिक प्रसंग हगारा
 देखा कलियों ने रोकर;
 फूलों ने सिसकी ले कर
 कुशों ने आहं भर भर ।
 अरी वेदने ! सजग विश्व में
 छार्द उल्झपातों में;
 और अत्र में अमती प्रतिपन्न
 विकृत्य वानु की घातों सी ।

निःश्वास

कोमल अरुण भावनाओं पर
यह छाया बाष्प सलिल कैसा;
नव कलिका के अरुण अंग पर
छा जाता तुषार कैसा ।

नागृत अपलक विकरु श्वास से
मानव कर्क कोमल गायी;
अनित विश्व चेतन में गाई
अनकल करुणा इत्यार्थी ।

नर्तन तृप्त में नयी मानवना
है अनिशापा में दवनी;
जब मानव मूक—भाषना य
ते मन्त्रल भी सी हँसती ।

सन्ध्या कर आह्वान स्वर्गों का
 जब स्फुरभुट मे सो जाती;
 जग निर्झर की कोमल वाणी
 मंगल गीत सजा लाती ।

ऊषा में अनुराग मधुरतम
 करुण करुण सा होकर आज;
 करुणा के संग गानों मे
 प्रमुदित करत अनुज संगत ।

जौन वेदना जगी विद्व मे
 कोने कोने मे छाई;
 कौन निठुरता उतर क्षितिज से
 कोमल झूलो पर आई ।

निःश्वास

सन्ध्या भी ले दिन हगों को
सो जाती अम्बर तल में;
ऊषा में जागृति की हलचल
रंजित कर कर पल पल में ।
पगली सी बयो विकल वेदना
फिरती मारी मारी सी,
कभी कणों में कभी तृणों में
सोती नभ में हारी सी ।
गरन रक्ष्य के कैमे क्षण की
कृष्णा मगी कहानी ले;
आज चले बयो प्ररतर पथ पर
निर्गल मृग उलहना ले ।

निःश्वास

व्यर्थ गगन में घिर घिर उमड़ी
बदली तरल हृदय वाली;
शून्य स्वरो से जड़ित हृदय क्या
सुन सकते ये मतवाली ।

सरिता में तरंग व्याकुल है
कोपल पर किरणें रोतीं;
नीड़ों में व्याकुल खलकूजन
लातिका में कलियाँ रोतीं ।

कैसे हो सम्मोह चेतना
रूपकी नीरव गानों में;
निर्भर उपालम्भ देता जब
गिरि को आविरल तानों में ।

आज बरसने दो प्रौंगन में
मृक्त भ्रमनाला से सादन;
-गने दों फिर प्यारु विश्व में
समा रहे प्राङ्गु प्रालिगन ।

निश्वास

बिखरे अरे धाज संसृति पर
निखर निखर कर उर मेरा;
मधु वन वन कर कलियाँ धरसे
तृण तृण में हो सरस सवेरा ।
नीली पुतली में पलकों के
सम्पुट में हो बन्द अजान;
स्वप्न सरकते ज्यों तन्द्रा में
फैले नव नव भाव विधान ।

निश्वास विघ्नते आते
आसू में मानस सोया;
छन्दों की बूंदे दुल कर
अवसाद उरों का घोया ।

मसि वही वाष्प सी सारी
तृप्तिका जादित कण्ठों में;
अनमोल बोल ये आसू
अलमस्यते अरुण दृगों में ।

नीले डोरों में झलका
 अनुराग रंग उर उर का;
 या भूला भूला फिरता
 मादक क्षण मधुप निकर का ।
 तारों में झँख मिचौनी
 कौमुदि से मादक श्वासें;
 अगणित दीपों को झलमल
 करती प्रकाश निश्वासे ।
 क्यों विकल राग तन्द्रा में
 घुलते स्वर्णिम स्वप्नों से;
 किस विरही की गाथा से
 मंक्रुचित मुमन युग युग से ।

निःश्वास

घिर घिर दृग में आती द्यो
वह एक अपूर्व अचेतन,
वेहोशी मादकता या
विस्मृति की पेशुष तड़फन ।

ऊषा का अरुण दृगाचल
कलियों की रक्तिम आँखें,
अनुराग लालिमा में रंग
गुलती यौवन की पाँखे ।

अम्बर में ऊषा सोयी
सो गया सुमन तातिका में;
धिरस्थायी हो न सकी सुस्मिति
कर, थकी विकल मानरु में ।

सोये आनत अधरो पर
 पत्तों के अगणित मीने;
 स्वर सरिता तट पर वेसुघ
 लहरी उर के द्रव मीने ।

शम्पा थक सोई घन में
 स्थायी परिम्म न मिलता;
 लहरें नीरव बेला में
 सोयी अवासाद न मिलता ।

द्रुम दल पर किरणों सोई
 धा लास अरे क्षण भर काः
 सौरभ लोया कलियों में
 रस राग रंग पल भर का ।

निश्वास

सोई ज्वाला कानन में
फैलाये लम्बी अलकें;
टिम टिम सोये नम तारे
निस्तब्ध किये सी पलकें ।

उनके उर में चचल हो
उठती हूँ अगणित ताने;
पाते न समा जब उर में
दन घहते बरवस गाने ।

दुःखनी उन्मद चेतनता
अगती पर सह न सकेगी;
अभिपत टाया मे कलियों
मदिरा विश्वग लुठकेगी ।

मुख की केवल वूँदे हैं
दुख का अथाह सागर है;
मौझी लपका वूँदों को
सागर डूबा तड़फन है ।

मिठे फल चखते चखते -
कटु फल जग भले समझता;
कण कण में करुणा विसरा
भारी मन हलका करता ।

धिर संचित प्रणय नित्य से
वहते रोदन के भरने;
जीवन का भीगा चेतन
पावस सा लगता ढरने ।

सब राग शून्य में त्रिखरे
केवल चिन्हित रव सारे;
मधु राका में विल खाते
चेतन्य क्षणों से तारे !

उन्मत्त विकल पागल से
भागों का जुटना मेता;
चंचल सर के उर में न्यो
फल इन्दु दिग्ब हो सेला ।

रस-आसव कंज कली का
 अमरों को सादन कर भी;
 चुक पाया आज न तक वह
 सौरभ घन बिखर बिखर भी ।

डर मौन विकल सा था में
 सपनों की तड़ित छिपाये;
 ये दृग नभ के कोनों में
 सादन के घन घिर आये ।

आउन्दर इत जगती के
 दूषित वासना जगाते;
 उन्मूक्त पटल धरणी के
 सुन्दर मृदु गात्र उठाते ।

द्रुम दल्ल भानत अवरो पर
क्यों तरु का मर्मर सोया;
सरिता उर अंचल में क्यों
कल कल स्वर भीगा खोया ।

अपने ही मर्मस्थल में
अपनी गाथा से पीड़ित;
थक रातें सो जाती क्यों
अम्बर में अर्द्धोन्मीलित ।

फैला कर घन कष जाली
हा हा स्वर कल सुमनों में;
सिसकी भर भर सन्ध्या क्यों
सोई क्षिति के कोनों में ।

थर थरा उठी मीड़ों में
 जीवन- की वीणा वरुणा;
 झङ्कार दुखी हृदयों की
 तानों से झंझन करुणा ।

तिलामिला हृदय उठता है
 लखकर अन्याय अलेखा;
 मुस्कान झोट रीती है
 छिप छिप निषाद की रेखा ।

सपना था आँख झंपी थी
 झकझोर मचाती पीडा;
 भावों के पत्र गिराकर
 हँसता समीर कर क्रीडा ।

निःश्वास

पतरुड़ सा सूना जीवन
लूओ सी साँसे चलती;
पत्तों में उड़ी हवा की
शाश्वत सितकी सुन पड़ती ।

मृदु कम्पन आल्हादों में
जागा था स्वप्न सरित सा;
काग्मित कमनीय लता पर
पुन्दर सौहार्द्र हरित सा ।

मृदु मञ्जु कञ्ज पुञ्जों पर
हृदय नीटार कणों में;
शुद्धित छल भावों की सी
धी चपल मल्लक सपनों में ।

निःश्वास

मुसका मुसका छिपती थी
जब बंकिम भृकुटि किसी की;
कौतुक म तृषा बुझाने
झलकी थी झलक किसी की ।

उस नम्र नवल सुपमा पर
लुट लुट पड़ते पागल मन;
मन में अर्पुर्ष मादकता
नयनों में मृदु उत्शीर्दन ।

आलोलित भानस सर में
भावना हिलोरे जागी;
पा शीतल स्पर्श किसी के
स्वर का, सय जडता भागी ।

मधुपों की मादक ध्वनियों
 स्वच्छन्द सरित कल कल में;
 पाकर अतीत के मृदु स्वर
 करती कल्लोल सहर में ।

छिप छिप कर मधुबालाएँ
 मधु अतु का मधु कुंजों में;
 मधुपों सी क्रीड़ा करती
 सुमनों से मिल कुंजों में ।

वातास शियिल हो छाता
 जब उदासीन नम तल में;
 बयो एकाएक खलबली
 मच उठती मम हतल में ।

आनन्द लहरियाँ सर सर
 ले ले कर मृदुल हिलोरें;
 फैली चञ्चल हो हो कर
 छा हरितामल की छोरें ।
 पा स्पर्श हृदय वीणा से
 निसृत मादक तानों का;
 है लहराता सा घाता
 श्यामल चञ्चल धानों का ।
 जैसे ही पुलक पुलक कर
 स्वमिल स्मृतियों जग पड़ना;
 कितनी आतुर सी होकर
 भावना सजग हो उठती ।

निःश्वास

स्वर्णिम पोखें फैला सित
बदली मराल वाला सी;
सुर चाप दाम लटकाये
आई अप्सरि वाला सी ।

स्वागत को भाव लली के
द्रुत आवेगों सी प्रेरित;
दौड़ी आती है जिसका
नीला अञ्चल झकझोरित ।

प्यासाकुल कंटों में ही
दावे भंकार हृदय की;
मैं उत्सुक हूँ रे कव से
झाँजी को उस हृदय की ।

निःश्वास-

आवेगा सखिल ह शॉखों में

उच्छ्वास ॥ विकल इश्वासों में ;

आकुल - उर - था उद्वेलित

हूवा ॥ सोया ॥ हिचकी - में

आभार ॥ ललक - पुस्तकों में ;

नत भार हुलस पलकों में ;

ब्रीडा - यह इ क्यों भृकुटी में

जय भेद न तुम्ह में - मुझ में ।

कितनी करुणा सोती है
कवि के कोमल - मानस में;
-ओ ! व्यथामयी निर्भम तू
जगती रोती - कण कण में ।

है खुली हृदय सशमिज की
मधु से भगी ये पाँखें;
'लो भर-लो मधुबालाओ
प्यासी न रहे - वे श्रौंसे ।

निःश्वास

इस तरल हृदय मानस में
उद्वेलित कोटि तरङ्गें;
इस दुर्बल जग पर छार्ई
शत शत नव सरस उमङ्गें ।

ले यदि जग को इच्छा है
फितने हैं पीने वाले;
मैं भी पर नहीं थक्कूंगा
भर भर तृपितों के प्याले ।

आँसू मरन्द मदिरा मा
आँसा में मदलाली सी;
सिलासिला उठे कुड्मल सी
आगें करुणा प्यासी सी ।

निःश्वास

इन विरह तप्त श्वासों का
चख चख मिठास यह जगती;
लघु प्राणों के दीपों से
शाश्वत प्रकाश सा भरती ।
करुणा का रे रस इस में
जगती हँसती क्यों निष्ठुर;
सहृदय मानस में पलती
कल्याण भावना शुचितर ।
मानस के शून्य बगारे
जति मृदम दिन्दु मी सरसीः
जग जग की दू मृदु दोरे
भायना घटः मी बरभा ।

निश्वास

सीमा से दूर कहीं ३ पर
जा - झूला मेरा ५ अन्तर;
भर ॥ लाया - अपने = उर ॥ में
उसके उर का ५ आकुल स्वर ।

आनन्द मिन्धु लहराता
भावना - उर्मियाँ शाश्वत;
प्रिय से मिलने को ५ आतुर
नापती ॥ छोर नभ तल ५ गत ।

आलहाद उमगता ५ आता
फूँती है मधु की कुब्जे;
कण कण में मोती बिखरा
हसता है मृदुल निकुब्जे ।

निःश्वास

अलसाई आँखें खोले
सुमसृणः पल्लव की पलकें;
खुलती हैं धीरे धीरे
आनन्दाशु से झलकें ।

जीवन के जीर्णः पुरातन
सघः पत्र झगा हर्षिते;
उत्सर्ग लिए पनपे से
नव - जीवन - ले मुसकाते ।

किरणों ने उतर क्षितिज से
कुञ्जों में हास बिखेरे;
फिर मनोभाव से खिलकर
अलियों के लगते फेरे ।

निःश्वास

ऊषा के मसृण कोमल
गद्गद् उर से वह वह कर;
छाई कपोल पर लाली
अनुराग राग से रंग कर ।

भव भी उस प्रणय मिलन के
क्षण सजग हो रहे सारे;
नीले पट पर अंकित सी
सुस्मृति में जगते तारे ।



